INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF MANAGEMENT SOCIOLOGY & HUMANITIES



ISSN 2277 – 9809 (online)
ISSN 2348 - 9359 (Print)

An Internationally Indexed Peer Reviewed & Refereed Journal

www.IRJMSH.com
www.isarasolutions.com

Published by iSaRa Solutions

गोपाल कृष्ण गोखले का राजनीतिक योगदान एवं भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में उनकी भूमिका: एक राजनीतिक अध्ययन

डॉ. बृजेश स्वरुप सोनकर

असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग

कर्म क्षेत्र स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इटावा (उ.प्र.)

शोध सार (Abstract)

गोपाल कृष्ण गोखले (1866-1915) आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन तथा राष्ट्रीय आंदोलन के प्रमुख उदारवादी नेताओं में से एक थे। उनका राजनीतिक दर्शन संवैधानिकता, क्रमिक सुधार, उत्तरदायी शासन, शिक्षा के प्रसार और सार्वजनिक जीवन में नैतिकता पर आधारित था। प्रस्तुत शोध-पत्र में गोखले के राजनीतिक विचारों, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में उनकी भूमिका, केंद्रीय विधान परिषद में उनके प्रयासों, औपनिवेशिक वित्तीय नीतियों की आलोचना तथा वर्ष 1905 में स्थापित भारत सेवक समाज के योगदान का विश्लेषण किया गया है। इसके साथ ही, प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य बनाने के उनके प्रयासों और महात्मा गांधी के राजनीतिक चिंतन पर उनके प्रभाव का भी अध्ययन किया गया है। अध्ययन का निष्कर्ष है कि यद्यपि गोखले की संवैधानिक पद्धति की सीमाएँ थीं, फिर भी उन्होंने भारतीय राजनीति में तर्कपूर्ण प्रतिरोध, संस्थागत सुधार, जनसेवा और नैतिक उत्तरदायित्व की परंपरा को सुदृढ़ किया। उनका योगदान भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के उदारवादी चरण को समझने के साथ-साथ लोकतांत्रिक राजनीति में संवाद, उत्तरदायित्व और सार्वजनिक सेवा के महत्त्व को स्पष्ट करता है।

बीज शब्द (Keywords): गोपाल कृष्ण गोखले, उदारवाद, संवैधानिकता, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, भारत सेवक समाज, प्राथमिक शिक्षा, महात्मा गांधी, भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन।

ऐतिहासिक एवं राजनीतिक पृष्ठभूमि (Historical and Political Background)

19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में भारत में आधुनिक शिक्षा, समाचार-पत्रों, सामाजिक सुधार आंदोलनों तथा राजनीतिक संगठनों के विकास ने राष्ट्रीय चेतना को नई दिशा प्रदान की। ब्रिटिश शासन की आर्थिक नीतियों, प्रशासनिक केंद्रीकरण, भारतीयों की सीमित राजनीतिक भागीदारी और सरकारी सेवाओं में असमान अवसरों ने शिक्षित भारतीयों के बीच राजनीतिक अधिकारों की माँग को प्रबल किया। इसी पृष्ठभूमि में 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना हुई, जिसने प्रारंभिक वर्षों में संवैधानिक सुधारों, प्रशासन में भारतीय प्रतिनिधित्व और आर्थिक नीतियों में परिवर्तन की माँग उठाई।

1. **उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध का भारत और राष्ट्रीय चेतना का अभ्युदय -** उन्नीसवीं शताब्दी का उत्तरार्ध भारतीय इतिहास में एक ऐसे युग के रूप में चिन्हित किया जाता है जब सदियों से सुप्त पड़ा भारतीय समाज औपनिवेशिक शासन की वास्तविक प्रकृति को समझने लगा था और उसमें एक नवीन राष्ट्रीय

चेतना का अंकुरण हो रहा था। ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन का अंत और 1858 में महारानी विक्टोरिया की घोषणा के पश्चात भारत का प्रत्यक्ष नियंत्रण ब्रिटिश क्राउन के हाथों में आ गया। औपनिवेशिक प्रशासकों का यह दावा था कि वे भारत में एक 'सभ्य, सुव्यवस्थित और आधुनिक' शासन की स्थापना कर रहे हैं, परंतु वास्तविकता इसके बिल्कुल विपरीत थी। ब्रिटिश शासन का मूल उद्देश्य भारतीय संसाधनों का निर्बाध दोहन करना और भारत को ब्रिटिश उद्योगों के लिए केवल कच्चे माल का आपूर्तिकर्ता तथा निर्मित वस्तुओं का बाज़ार बनाए रखना था। इसी कालखंड में अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली के प्रसार ने एक ऐसे शिक्षित मध्यम वर्ग को जन्म दिया जो पश्चिमी राजनीतिक विचारों–जैसे स्वतंत्रता, समानता, लोकतंत्र, विधि का शासन (Rule of Law) और संविधानवाद–से भली-भांति परिचित था। जॉन स्टुअर्ट मिल, जेरेमी बेंथम, एडमंड बर्क और जॉन लॉक जैसे पश्चिमी विचारकों के अध्ययन ने भारतीय बुद्धिजीवियों को अपनी वर्तमान राजनीतिक व आर्थिक स्थिति का तर्कसंगत और आलोचनात्मक मूल्यांकन करने की दृष्टि प्रदान की। इस शिक्षित वर्ग ने यह अनुभव किया कि ब्रिटिश शासन द्वारा किए जा रहे दावों और उनके वास्तविक प्रशासनिक आचरण में गहरा अंतर था।

राष्ट्रीय चेतना के इस विकास में समाचार-पत्रों और देशी भाषा के साहित्य ने एक अत्यंत महत्वपूर्ण उत्प्रेरक की भूमिका निभाई। 'द हिंदू', 'अमृत बाज़ार पत्रिका', 'बंगाली', 'केसरी', और 'मराठा' जैसे समाचार-पत्रों ने न केवल औपनिवेशिक नीतियों की जन-विरोधी नीतियों को उजागर किया, बल्कि देश के विभिन्न हिस्सों में रह रहे लोगों को एक साझा राष्ट्रीय पहचान और साझा दुखों के धरातल पर जोड़ने का कार्य भी किया। इसके साथ ही, राजा राममोहन राय, स्वामी दयानंद सरस्वती, ईश्वरचंद्र विद्यासागर और महादेव गोविंद रानाडे द्वारा संचालित सामाजिक और धार्मिक सुधार आंदोलनों ने भारतीय समाज में व्याप्त रूढ़िवादिता, अंधविश्वास और सामाजिक कुरीतियों पर करारा प्रहार किया। इन सुधार आंदोलनों का स्पष्ट मानना था कि जब तक समाज अंदर से सुदृढ़, शिक्षित और नैतिक रूप से सशक्त नहीं होगा, तब तक कोई भी राजनीतिक आंदोलन सफल नहीं हो सकता।

2. **औपनिवेशिक नीतियाँ, आर्थिक दोहन और बढ़ती असंतोष की लहर** - ब्रिटिश शासन की आर्थिक और प्रशासनिक नीतियों ने भारतीयों के भीतर असंतोष को गहरा कर दिया था। दादाभाई नौरोजी द्वारा प्रतिपादित 'धन के निष्कासन का सिद्धांत' (Drain of Wealth Theory) ने यह स्पष्ट कर दिया कि किस प्रकार भारत की संपदा निरंतर इंग्लैंड भेजी जा रही थी, जिससे भारत दिन-प्रतिदिन निर्धन होता जा रहा था और बारंबार भीषण अकालों की चपेट में आ रहा था। भारतीय हस्तशिल्प और पारंपरिक उद्योगों का पतन, भू-राजस्व की कठोर प्रणाली, और कृषि के अनियोजित वाणिज्याचीकरण ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था को पूरी तरह से तबाह कर दिया था। प्रशासनिक क्षेत्र में भी भारतीयों के साथ घोर भेदभाव किया जाता था। यद्यपि 1858 की घोषणा में यह आश्वासन दिया गया था कि जाति, धर्म या वर्ण के आधार पर प्रशासनिक सेवाओं में कोई भेदभाव नहीं होगा, परंतु व्यावहारिक रूप से उच्च प्रशासनिक पदों (जैसे इंडियन सिविल सर्विस) पर भारतीयों का प्रवेश अत्यंत कठिन बना दिया गया था। आयु सीमा में कटौती और परीक्षाओं का केवल लंदन में आयोजित होना भारतीयों को सत्ता के गलियारों से बाहर रखने की सोची-समझी रणनीति का हिस्सा था।

1870 और 1880 के दशकों में लॉर्ड लिटन के दमनकारी कार्यकालों–विशेषकर 'वर्नाक्यूलर प्रेस एक्ट' (1878), 'आर्म्स एक्ट' (1878) और द्वितीय अफगान युद्ध पर भारतीय राजस्व का अपव्यय–ने इस जन-असंतोष को और भड़का दिया। इसके बाद जब लॉर्ड रिपन के कार्यकाल में 'इल्बर्ट बिल' (1883) लाया गया, जिसका उद्देश्य भारतीय जजों को यूरोपीय अपराधियों के मुकदमों की सुनवाई का अधिकार देना था, तब भारत में रहने वाले अंग्रेजों ने इसका उग्र विरोध किया। इस 'श्वेत विद्रोह' ने भारतीय बुद्धिजीवियों की आंखें खोल दीं। उन्हें यह स्पष्ट समझ आ गया कि न्याय और समानता के ब्रिटिश दावे केवल छलावा हैं और जब तक भारतीय संगठित होकर अपने अधिकारों के लिए आवाज नहीं उठाएंगे, तब तक उन्हें कोई राजनीतिक अधिकार प्राप्त नहीं होगा।

3. **भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना और प्रारंभिक उदारवादी धारा -** इल्बर्ट बिल विवाद के पश्चात एक अखिल भारतीय राजनीतिक संगठन की आवश्यकता तीव्र गति से महसूस की जाने लगी। इसी पृष्ठभूमि में दिसंबर 1885 में बॉम्बे में 'भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस' (Indian National Congress) की स्थापना हुई। इसके संस्थापकों में ए. ओ. ह्यूम, दादाभाई नौरोजी, व्योमेश चंद्र बनर्जी, दिनशॉ वाचा और बदरुद्दीन तैयबजी जैसे अग्रगामी नेता शामिल थे। कांग्रेस के शुरुआती दो-तीन दशकों (1885-1905) को 'उदारवादी युग' (Moderate Era) के नाम से जाना जाता है। इस कालखंड के प्रमुख नेताओं में दादाभाई नौरोजी, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, फिरोजशाह मेहता, और गोपाल कृष्ण गोखले प्रमुख थे। उदारवादी नेताओं का मानना था कि ब्रिटिश शासन भारत के लिए एक प्रकार से वरदान सिद्ध हो सकता है यदि उसे भारतीयों की वास्तविक समस्याओं से अवगत कराया जाए। वे ब्रिटिश न्यायप्रियता और संसद में गहरा विश्वास रखते थे। उदारवादियों की कार्यशैली मुख्यतः संवैधानिक साधनों तक सीमित थी, जिसे प्रायः "3Ps"–Petitions (याचिकाएं), Prayers (प्रार्थना) और Protests (विरोध)–कहा जाता था। वे अचानक किसी बड़े क्रांतिकारी परिवर्तन की अपेक्षा क्रमिक सुधारों (Incremental Reforms) के पक्षधर थे। उनकी प्रमुख मांगों में शामिल थीं:
    1. केंद्रीय व प्रांतीय विधान परिषदों का विस्तार और उसमें निर्वाचित प्रतिनिधियों की संख्या में वृद्धि।
    2. बजट पर बहस करने और प्रश्न पूछने का अधिकार।
    3. सिविल सेवाओं का भारत और इंग्लैंड में एक साथ आयोजन तथा प्रवेश आयु में वृद्धि।
    4. सैन्य व्यय में कटौती और भारत से धन के निष्कासन पर रोक।
    5. प्राथमिक शिक्षा का प्रसार और न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक करना।

    यद्यपि बाद के काल में इस उदारवादी शैली की आलोचना की गई, परंतु इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि इस दौर में उदारवादियों ने भारत में एक साझा राजनीतिक मंच तैयार किया और देशवासियों को राजनीतिक रूप से शिक्षित करने का ऐतिहासिक कार्य किया।

4. **गोपाल कृष्ण गोखले: व्यक्तित्व, वैचारिक पृष्ठभूमि और रानाडे का प्रभाव -** गोपाल कृष्ण गोखले का जन्म 9 मई 1866 को महाराष्ट्र के रत्नागिरी जिले के कोटलुक गांव में एक चितपावन ब्राह्मण परिवार में हुआ था। अत्यधिक आर्थिक तंगी के बावजूद उन्होंने अपनी लगन और मेधा के बल पर एलफिंस्टन

कॉलेज, बॉम्बे से उच्च शिक्षा प्राप्त की। शिक्षा पूर्ण करने के पश्चात उन्होंने डेक्कन एजुकेशन सोसाइटी के माध्यम से फर्ग्यूसन कॉलेज, पुणे में अध्यापन कार्य प्रारंभ किया, जहाँ वे इतिहास और अर्थशास्त्र के प्राध्यापक बने। गोखले के व्यक्तित्व और चिंतन पर सर्वाधिक प्रभाव 'महाराष्ट्र के सुकरात' कहे जाने वाले न्यायमूर्ति महादेव गोविंद रानाडे का पड़ा। गोखले, रानाडे को अपना आध्यात्मिक और राजनीतिक गुरु मानते थे। रानाडे से ही गोखले ने यह सीखा कि राजनीति कोई सतही सत्ता का खेल नहीं है, बल्कि यह गहन अध्ययन, आंकड़ों के यथार्थ विश्लेषण और जनसेवा का एक पवित्र उत्तरदायित्व है। रानाडे की वैचारिक परंपरा का अनुसरण करते हुए गोखले का यह स्पष्ट मत था कि:

- **सामाजिक सुधार और राजनीतिक प्रगति का सह-संबंध:** भारत केवल राजनीतिक अधिकारों की मांग करके सशक्त नहीं हो सकता, जब तक कि वह जातिगत भेदभाव, निरक्षरता, महिलाओं की अधीनता और अंधविश्वास जैसी सामाजिक बुराइयों को दूर न करे।
- **संस्थागत विकास और क्षमता निर्माण:** स्वतंत्रता या स्वशासन कोई ऐसी वस्तु नहीं है जो रातों-रात प्राप्त हो जाए; इसके लिए भारतीय जनता में प्रशासनिक दक्षता, नागरिक कर्तव्यबोध और विधायी परिपक्वता का होना आवश्यक है।
- **आर्थिक यथार्थवाद:** गोखले ने रानाडे की आर्थिक दृष्टि को आगे बढ़ाते हुए औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था के सूक्ष्म आंकड़ों का अध्ययन किया और यह सिद्ध किया कि भारत की निर्धनता का मूल कारण ब्रिटिश सरकार की दोषपूर्ण नीतियाँ और अत्यधिक कर-भार हैं।

गोखले के लिए राष्ट्र-निर्माण का अर्थ केवल ब्रिटिश शासन का अंधविरोध करना नहीं था। उनका मानना था कि राष्ट्र-निर्माण एक सकारात्मक प्रक्रिया है, जिसके लिए ठोस विधायी कार्य, सामाजिक पुनर्गठन, और एक ऐसे चरित्रवान नागरिक वर्ग का निर्माण आवश्यक है जो देश हित को अपने व्यक्तिगत हितों से ऊपर रख सके।

5. **उदारवादी और उग्रवादी दृष्टिकोण का टकराव तथा गोखले का राजनीतिक दायित्व -** 20वीं शताब्दी के प्रारंभ में भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन एक अत्यंत जटिल और निर्णायक मोड़ पर पहुँच गया। 1890 के दशक में पड़े भीषण अकालों, प्लेग की महामारी और उस पर ब्रिटिश सरकार के निर्दयी रवैये ने युवाओं के भीतर भारी असंतोष भर दिया था। इसके साथ ही, 1905 में लॉर्ड कर्जन द्वारा किए गए 'बंगाल विभाजन' ने पूरे देश में आक्रोश की एक नई लहर पैदा कर दी। इस ऐतिहासिक मोड़ पर कांग्रेस दो स्पष्ट वैचारिक धड़ों में विभाजित होने लगी:

   a. **उदारवादी धड़ा (Moderates):** जिसका नेतृत्व फिरोजशाह मेहता, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी और गोपाल कृष्ण गोखले कर रहे थे। इनका मानना था कि विरोध प्रदर्शनों को कानून और संविधान की सीमाओं के भीतर ही रहना चाहिए ताकि ब्रिटिश सरकार को आंदोलन का कठोरता से दमन करने का अवसर न मिले।
   b. **उग्रवादी/राष्ट्रवादी धड़ा (Extremists):** जिसका नेतृत्व 'लाल-बाल-पाल' (लाला लाजपत राय, बाल गंगाधर तिलक, विपिन चंद्र पाल) कर रहे थे। इनका तर्क था कि याचिकाओं और प्रार्थनाओं का युग अब समाप्त हो चुका है। वे 'स्वदेशी', 'बहिष्कार' (Boycott), और 'निष्क्रिय प्रतिरोध' (Passive Resistance) के माध्यम से 'स्वराज' की तत्काल प्राप्ति चाहते थे।

गोखले इस वैचारिक द्वंद्व के ठीक मध्य में स्थित थे। एक तरफ जहाँ वे उग्रवादी धड़े की उग्रता और असंवैधानिक तरीकों से असहमत थे–क्योंकि उनका मानना था कि असंगठित और हिंसक विरोध से आंदोलन बिखर जाएगा और ब्रिटिश दमन के कारण कांग्रेस जैसी युवा संस्था नष्ट हो जाएगी–वहीं दूसरी ओर वे ब्रिटिश शासन की जन-विरोधी नीतियों के उतने ही कठोर आलोचक थे जितने कि तिलक या लाला लाजपत राय। 1905 के कांग्रेस के बनारस अधिवेशन में, जिसकी अध्यक्षता स्वयं गोखले ने की थी, उन्होंने लॉर्ड कर्जन की तुलना मुग़ल सम्राट औरंगज़ेब से करते हुए उनके दमनकारी शासन की तीव्र भर्त्सना की। उन्होंने स्वदेशी के आर्थिक सिद्धांत का पूर्ण समर्थन किया, परंतु आंदोलन को एक संयमित और संवैधानिक दिशा में बनाए रखने का भरसक प्रयास किया। गोखले का ऐतिहासिक दायित्व यह था कि वे एक तरफ ब्रिटिश हुकूमत के साथ तार्किक और दृढ़ बातचीत के माध्यम से अधिक से अधिक राजनीतिक व प्रशासनिक अधिकार प्राप्त करें, और दूसरी तरफ भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन को अराजकता और दमन के भंवर से बचाकर उसे एक परिपक्व, संवैधानिक और नैतिक धरातल प्रदान करें। इसलिए, गोखले के संपूर्ण राजनीतिक योगदान का निष्पक्ष मूल्यांकन केवल उसी तत्कालीन ऐतिहासिक, सामाजिक और राजनीतिक पृष्ठभूमि के आलोक में किया जा सकता है जिसमें वे कार्य कर रहे थे।

शोध समस्या (Research Problem)

गोपाल कृष्ण गोखले का भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में योगदान प्रायः उदारवादी राजनीति और संवैधानिक सुधारों तक सीमित करके देखा जाता है। इस दृष्टिकोण में उनके आर्थिक विश्लेषण, प्राथमिक शिक्षा के प्रसार, सार्वजनिक सेवा के संस्थानीकरण तथा गांधी के राजनीतिक चिंतन पर उनके प्रभाव का पर्याप्त समेकित मूल्यांकन नहीं हो पाता। प्रस्तुत शोध की मुख्य समस्या यह समझना है कि औपनिवेशिक शासन की सीमाओं के भीतर संवैधानिक साधनों का उपयोग करते हुए गोखले ने भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन को किस प्रकार वैचारिक, संस्थागत और व्यावहारिक आधार प्रदान किया। इसके साथ ही यह परीक्षण भी आवश्यक है कि उनकी क्रमिक सुधारवादी नीति की उपलब्धियाँ क्या थीं और उसकी सीमाएँ कहाँ तक थीं।

अध्ययन के उद्देश्य (Objectives of the Study)

1. गोपाल कृष्ण गोखले के राजनीतिक चिंतन एवं उदारवादी दर्शन के प्रमुख सिद्धांतों का विश्लेषण करना।
2. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में उनके नेतृत्व तथा राष्ट्रीय आंदोलन में उनकी भूमिका का अध्ययन करना।
3. गोखले की संवैधानिक पद्धति की उपलब्धियों और सीमाओं का आलोचनात्मक मूल्यांकन करना।

शोध प्रश्न (Research Questions)

1. गोखले के राजनीतिक दर्शन के प्रमुख आधार क्या थे?
2. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और औपनिवेशिक विधायी संस्थाओं में उन्होंने किस प्रकार राजनीतिक हस्तक्षेप किया?
3. शिक्षा, वित्त और प्रशासन संबंधी सुधारों में उनके योगदान का क्या महत्त्व था?
4. गांधी के राजनीतिक विचारों और कार्यपद्धति पर गोखले का प्रभाव किस प्रकार दिखाई देता है?
5. गोखले की संवैधानिक राजनीति की प्रमुख उपलब्धियाँ और सीमाएँ क्या थीं?

परिकल्पना (Hypothesis)

गोपाल कृष्ण गोखले की संवैधानिक एवं क्रमिक सुधारवादी राजनीति ने भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन को वैचारिक स्पष्टता, संस्थागत अनुभव और नैतिक आधार प्रदान किया। यद्यपि यह पद्धति औपनिवेशिक शासन की संरचनात्मक सीमाओं के कारण तत्काल स्वशासन प्राप्त करने में सफल नहीं हुई, फिर भी इसने उत्तरदायी शासन, जनसेवा, शिक्षा और लोकतांत्रिक राजनीतिक भागीदारी के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

साहित्य का पुनरावलोकन (Review of Literature)

गोपाल कृष्ण गोखले के राजनीतिक योगदान को समझने के लिए आधुनिक भारतीय इतिहास, उदारवादी राष्ट्रवाद और औपनिवेशिक शासन के अध्ययन से संबंधित प्रमुख पुस्तकों का अवलोकन आवश्यक है :

बी. आर. नंदा की कृति गोखले: द इंडियन मॉडरेट्स एंड द ब्रिटिश राज गोखले के जीवन, राजनीतिक विचारों और ब्रिटिश शासन के साथ उनके संबंधों को समझने में महत्त्वपूर्ण है। यह अध्ययन उनके उदारवादी दृष्टिकोण और संवैधानिक सुधारों के प्रयासों को ऐतिहासिक संदर्भ में रखता है।

स्टैनली वोल्पर्ट की पुस्तक तिलक एंड गोखले: रिवोल्यूशन एंड रिफॉर्म इन द मेकिंग ऑफ मॉडर्न इंडिया गोखले और बाल गंगाधर तिलक के राजनीतिक दृष्टिकोणों के अंतर को समझने में सहायक है। इससे उदारवादी और उग्रवादी धाराओं के बीच रणनीतिक तथा वैचारिक मतभेदों का विश्लेषण किया जा सकता है।

बिपिन चंद्र और उनके सहलेखकों की कृति इंडियाज़ स्ट्रगल फॉर इंडिपेंडेंस भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के विभिन्न चरणों का व्यापक ऐतिहासिक विवेचन प्रस्तुत करती है। यह ग्रंथ गोखले के योगदान को कांग्रेस के प्रारंभिक विकास तथा औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध राजनीतिक चेतना के विस्तार के संदर्भ में समझने में उपयोगी है।

महात्मा गांधी की आत्मकथात्मक कृति सत्य के प्रयोग अथवा आत्मकथा गोखले के प्रति उनके सम्मान और राजनीतिक मार्गदर्शन संबंधी अनुभवों को समझने का महत्त्वपूर्ण प्राथमिक स्रोत है। इसके माध्यम से गांधी के राजनीतिक विकास में गोखले की भूमिका का अध्ययन किया जा सकता है।

समग्रतः उपलब्ध साहित्य गोखले की संवैधानिक राजनीति, उदारवादी दृष्टिकोण और राष्ट्रीय आंदोलन में योगदान को समझने का आधार प्रदान करता है। साथ ही, इन स्रोतों के तुलनात्मक अध्ययन से उनके राजनीतिक दर्शन, सामाजिक सेवा, शिक्षा संबंधी प्रयासों तथा उनकी राजनीति की सीमाओं का समेकित मूल्यांकन संभव होता है।

शोध-अंतराल (Research Gap)

उपलब्ध साहित्य में गोखले के उदारवादी चिंतन, कांग्रेस में उनकी भूमिका और गांधी पर उनके प्रभाव का उल्लेख मिलता है, किंतु इन सभी पक्षों को वित्तीय आलोचना, प्राथमिक शिक्षा, सार्वजनिक सेवा और औपनिवेशिक संस्थाओं के भीतर राजनीतिक हस्तक्षेप के साथ एकीकृत रूप में देखने की आवश्यकता बनी रहती है। प्रस्तुत अध्ययन इन पक्षों का संयुक्त विश्लेषण करते हुए गोखले की उपलब्धियों और सीमाओं का संतुलित मूल्यांकन करने का प्रयास करता है।

शोध पद्धति (Research Methodology)

प्रस्तुत अध्ययन ऐतिहासिक-विश्लेषणात्मक एवं गुणात्मक शोध पद्धति पर आधारित है। इसमें गोखले के राजनीतिक विचारों और गतिविधियों का उनके समय की सामाजिक, आर्थिक तथा औपनिवेशिक परिस्थितियों के संदर्भ में विश्लेषण किया गया है। अध्ययन में प्राथमिक स्रोतों के रूप में गोखले के भाषणों, विधान परिषद में प्रस्तुत

विचारों, उनके सार्वजनिक वक्तव्यों तथा गांधी की आत्मकथा का उपयोग किया गया है। द्वितीयक स्रोतों में आधुनिक भारतीय इतिहास, उदारवादी राष्ट्रवाद और गोखले के जीवन एवं विचारों पर आधारित प्रामाणिक पुस्तकों का सहारा लिया गया है। शोध में ऐतिहासिक विवरण, विचारों की तुलना और आलोचनात्मक विश्लेषण के माध्यम से यह समझने का प्रयास किया गया है कि गोखले की राजनीतिक पद्धति ने राष्ट्रीय आंदोलन को किस प्रकार प्रभावित किया। अध्ययन का उद्देश्य किसी पूर्वनिर्धारित धारणा की पुष्टि करना नहीं, बल्कि उपलब्ध ऐतिहासिक साक्ष्यों के आधार पर उनके योगदान और सीमाओं का मूल्यांकन करना है।

सैद्धांतिक आधार (Theoretical Framework)

गोखले के राजनीतिक चिंतन का विश्लेषण मुख्यतः उदारवाद, संवैधानिकता और क्रमिक सुधार के सिद्धांतों के आधार पर किया जा सकता है :

उदारवाद (Liberalism): उदारवादी दृष्टिकोण व्यक्ति की स्वतंत्रता, शिक्षा, समान अवसर और शासन में नागरिक भागीदारी को महत्त्व देता है। गोखले भारतीयों के लिए अधिक राजनीतिक प्रतिनिधित्व, प्रशासनिक सुधार और नागरिक अधिकारों के विस्तार के समर्थक थे। संवैधानिकता (Constitutionalism): संवैधानिकता का अर्थ शासन की शक्तियों को नियमों, संस्थाओं और उत्तरदायित्व की व्यवस्थाओं के अधीन रखना है। गोखले ने विधान परिषद, सार्वजनिक बहस, याचिकाओं और वैधानिक सुधारों के माध्यम से औपनिवेशिक नीतियों को चुनौती दी। उनका विश्वास था कि तर्कपूर्ण राजनीतिक हस्तक्षेप से शासन को अधिक उत्तरदायी बनाया जा सकता है। क्रमिक सुधारवाद (Gradual Reformism): गोखले के अनुसार राजनीतिक स्वशासन की दिशा में प्रगति के लिए शिक्षा, प्रशासनिक अनुभव और संस्थागत क्षमता का विकास आवश्यक था। वे तत्काल व्यापक राजनीतिक परिवर्तन की तुलना में चरणबद्ध सुधारों को अधिक व्यावहारिक मानते थे। हालाँकि, इस दृष्टिकोण की सीमा यह थी कि इसकी सफलता काफी हद तक औपनिवेशिक शासकों की सुधार स्वीकार करने की इच्छा पर निर्भर थी।

इन सैद्धांतिक आधारों से स्पष्ट होता है कि गोखले का राजनीतिक दर्शन केवल ब्रिटिश संस्थाओं के अनुकरण तक सीमित नहीं था। वे उन्हीं संस्थाओं और प्रक्रियाओं का उपयोग भारतीयों के अधिकारों के विस्तार तथा शासन में उनकी भागीदारी बढ़ाने के लिए करना चाहते थे।

गोखले का राजनीतिक दर्शन एवं मूल सिद्धांत (Political Philosophy and Core Principles)

1. संवैधानिक साधनों में विश्वास (Faith in Constitutional Means)

गोखले राजनीतिक परिवर्तन के लिए संवाद, याचिका, सार्वजनिक आलोचना, विधायी बहस और प्रशासनिक सुधारों को महत्त्व देते थे। उनका मानना था कि तर्क और प्रमाण के आधार पर औपनिवेशिक शासन की नीतियों की कमियों को सामने लाकर भारतीयों के अधिकारों का विस्तार किया जा सकता है। उनकी संवैधानिक पद्धति को निष्क्रियता के रूप में देखना उचित नहीं होगा। विधान परिषद में उन्होंने सरकारी नीतियों की आलोचना की, वित्तीय प्राथमिकताओं पर प्रश्न उठाए और शिक्षा जैसे विषयों पर ठोस प्रस्ताव प्रस्तुत किए। फिर भी, उनकी पद्धति की प्रभावशीलता औपनिवेशिक शासन की सीमित राजनीतिक जवाबदेही के कारण बाधित होती रही।

2. राजनीति में नैतिकता एवं सार्वजनिक सेवा (Ethics and Public Service in Politics)

गोखले राजनीति को सार्वजनिक उत्तरदायित्व और जनकल्याण से जुड़ी गतिविधि मानते थे। उनके लिए राजनीतिक नेतृत्व का मूल्य केवल सत्ता या लोकप्रियता से निर्धारित नहीं होता था, बल्कि इस बात से भी होता था कि वह समाज के हित में कितना कार्य करता है। भारत सेवक समाज की स्थापना इसी विचार का संस्थागत रूप थी। गोखले ने प्रशिक्षित, अनुशासित और जनसेवा के प्रति समर्पित कार्यकर्ताओं की आवश्यकता पर बल दिया। इस दृष्टिकोण ने राजनीति में व्यक्तिगत लाभ के स्थान पर सार्वजनिक कर्तव्य को प्राथमिकता देने की परंपरा को प्रोत्साहित किया।

3. स्वशासन और राजनीतिक प्रशिक्षण (Self-Government and Political Training)

गोखले स्वशासन की दिशा में भारतीयों की क्रमिक प्रगति के पक्षधर थे। उनका विश्वास था कि शिक्षा, प्रशासनिक अनुभव और राजनीतिक संस्थाओं में भागीदारी से भारतीय समाज स्वशासन के लिए आवश्यक क्षमताएँ विकसित कर सकता है। यह दृष्टिकोण उनके समय की परिस्थितियों में व्यावहारिक माना जा सकता है, लेकिन इसकी आलोचना इस आधार पर भी हुई कि इससे ब्रिटिश शासन के प्रति अपेक्षाकृत अधिक धैर्य और विश्वास प्रदर्शित होता था। इसके बावजूद, भारतीयों की प्रशासनिक भागीदारी और उत्तरदायी शासन की माँग उनके राजनीतिक कार्यक्रम के केंद्रीय तत्व थे।

4. आर्थिक न्याय और वित्तीय उत्तरदायित्व (Economic Justice and Fiscal Accountability)

गोखले ने औपनिवेशिक वित्तीय नीतियों का विश्लेषण करते हुए सैन्य व्यय, कराधान, नमक कर और जनता पर पड़ने वाले आर्थिक भार जैसे प्रश्न उठाए। उनके बजट भाषणों का महत्त्व इस बात में था कि वे सरकारी वित्त को केवल प्रशासनिक विषय न मानकर जनकल्याण और आर्थिक न्याय से जोड़ते थे। वे चाहते थे कि सार्वजनिक धन का उपयोग भारतीय जनता की आवश्यकताओं, विशेषकर शिक्षा और सामाजिक विकास के लिए अधिक प्रभावी ढंग से किया जाए। इस प्रकार उनका आर्थिक चिंतन औपनिवेशिक शासन की प्राथमिकताओं की आलोचना और जनकल्याणकारी व्यय की माँग से जुड़ा हुआ था।

12. भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में गोखले की भूमिका (Role in the Indian National Movement)

1. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में नेतृत्व (Leadership in the Indian National Congress)

गोखले 1889 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस से जुड़े और आगे चलकर उसके प्रमुख नेताओं में शामिल हुए। वर्ष 1905 में उन्होंने बनारस अधिवेशन की अध्यक्षता की। यह समय बंगाल विभाजन और उसके विरोध में उभरते स्वदेशी आंदोलन के कारण अत्यंत महत्त्वपूर्ण था। गोखले ने बंगाल विभाजन की आलोचना की और भारतीयों की राजनीतिक भागीदारी के विस्तार पर बल दिया। वे स्वदेशी के समर्थक थे, किंतु आंदोलन की रणनीति में संवैधानिक तरीकों और राजनीतिक संयम को महत्त्व देते थे। उनका प्रयास था कि राष्ट्रीय आंदोलन जनहित के प्रश्नों पर आधारित हो तथा उसकी माँगें तर्कपूर्ण और संगठित रूप में प्रस्तुत की जाएँ।

कांग्रेस के उदारवादी चरण में उनका योगदान संगठनात्मक विकास, राजनीतिक संवाद और प्रशासनिक सुधारों की माँग को व्यवस्थित रूप देने में दिखाई देता है।

2. भारत सेवक समाज की स्थापना (Establishment of the Servants of India Society)

स्थापना: 12 जून 1905, पुणे,

गोखले ने भारत सेवक समाज की स्थापना राष्ट्रसेवा के लिए समर्पित कार्यकर्ताओं को तैयार करने के उद्देश्य से की। इसका लक्ष्य शिक्षा, सामाजिक सुधार, नागरिक चेतना और जनकल्याण से संबंधित गतिविधियों को संगठित रूप देना था। समाज के कार्यकर्ताओं से अपेक्षा की जाती थी कि वे अनुशासन, सादगी और सार्वजनिक सेवा के आदर्शों का पालन करें। इस संस्था ने राजनीति को केवल नेतृत्व और भाषण तक सीमित न रखते हुए सामाजिक जीवन में निरंतर कार्य करने की अवधारणा को बढ़ावा दिया। भारत सेवक समाज का महत्त्व इस बात में था कि उसने राष्ट्रनिर्माण के लिए प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं और सामाजिक सेवा को संस्थागत रूप देने का प्रयास किया। यह गोखले की इस मान्यता का व्यावहारिक उदाहरण था कि राजनीतिक स्वतंत्रता और सामाजिक उन्नति के लिए जागरूक नागरिकों तथा समर्पित सार्वजनिक कार्यकर्ताओं की आवश्यकता होती है।

3. केंद्रीय विधान परिषद में भूमिका (Role in the Imperial Legislative Council)

गोखले 1902 में इंपीरियल लेजिस्लेटिव काउंसिल के सदस्य बने। इस मंच का उपयोग उन्होंने भारतीयों की समस्याओं, प्रशासनिक कमियों और औपनिवेशिक नीतियों के आर्थिक प्रभावों को सामने रखने के लिए किया। उनके भाषणों में आँकड़ों, तर्कों और वित्तीय विवरणों का महत्त्वपूर्ण स्थान था। उन्होंने सैन्य व्यय पर प्रश्न उठाए, नमक कर में कमी की माँग की और शिक्षा तथा कृषि संबंधी समस्याओं पर ध्यान आकर्षित किया। इस प्रकार उन्होंने विधायी मंच को सरकार की नीतियों की आलोचना और जनहित की माँगों को प्रस्तुत करने का माध्यम बनाया। हालाँकि परिषद में निर्वाचित भारतीय प्रतिनिधियों की शक्ति सीमित थी और अंतिम निर्णयों पर ब्रिटिश सरकार का प्रभाव बना रहता था, फिर भी गोखले की भूमिका ने विधायी बहस को अधिक तथ्यपरक तथा उत्तरदायित्व-केंद्रित बनाने में योगदान दिया।

4. प्राथमिक शिक्षा का प्रसार (Promotion of Primary Education)

गोखले शिक्षा को सामाजिक और राजनीतिक प्रगति की अनिवार्य शर्त मानते थे। उनका विश्वास था कि व्यापक शिक्षा के बिना नागरिक चेतना, राजनीतिक भागीदारी और स्वशासन की संभावनाएँ सीमित रहेंगी। उन्होंने 1911 में प्राथमिक शिक्षा को निःशुल्क और अनिवार्य बनाने के उद्देश्य से केंद्रीय विधान परिषद में विधेयक प्रस्तुत किया। यह विधेयक पारित नहीं हो सका, फिर भी इसने प्राथमिक शिक्षा को सार्वजनिक नीति के केंद्रीय प्रश्न के रूप में स्थापित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनके प्रयासों का ऐतिहासिक महत्त्व इस बात में है कि उन्होंने शिक्षा को केवल व्यक्तिगत उन्नति का साधन नहीं, बल्कि राज्य के सार्वजनिक दायित्व और राष्ट्रनिर्माण की आवश्यकता के रूप में प्रस्तुत किया।

5. वित्तीय एवं प्रशासनिक सुधारों की माँग (Demand for Fiscal and Administrative Reforms)

गोखले ने सरकारी वित्तीय नीति की समीक्षा करते हुए सैन्य व्यय और जनता पर करों के भार को कम करने की आवश्यकता पर बल दिया। उन्होंने प्रशासन में भारतीयों की भागीदारी बढ़ाने, अकाल और कृषि संकट जैसी समस्याओं पर प्रभावी कार्रवाई करने तथा जनकल्याणकारी व्यय को प्राथमिकता देने की माँग की। उनकी वित्तीय आलोचना की विशेषता यह थी कि वे सरकारी आँकड़ों और बजट के आधार पर नीतियों की समीक्षा करते थे। इससे राष्ट्रीय आंदोलन में आर्थिक प्रश्नों पर तर्कपूर्ण बहस को प्रोत्साहन मिला। उनके विचारों ने औपनिवेशिक शासन के आर्थिक स्वरूप और उसकी जनकल्याण संबंधी प्राथमिकताओं पर प्रश्न उठाने में योगदान दिया।

6. मॉर्ले-मिंटो सुधारों के प्रति दृष्टिकोण (Approach to the Morley-Minto Reforms)

भारतीय परिषद अधिनियम, 1909, जिसे सामान्यतः मॉर्ले-मिंटो सुधार कहा जाता है, ने विधायी परिषदों का विस्तार किया और सीमित राजनीतिक प्रतिनिधित्व के अवसर बढ़ाए। गोखले जैसे उदारवादी नेताओं की माँगों और संवैधानिक दबाव ने प्रतिनिधित्व के प्रश्न को राजनीतिक विमर्श में महत्त्वपूर्ण बनाया था। हालाँकि, इन सुधारों को केवल गोखले के प्रयासों का परिणाम मानना ऐतिहासिक रूप से उचित नहीं होगा। इन सुधारों की सीमाएँ स्पष्ट थीं। परिषदों के अधिकार सीमित रहे और पृथक निर्वाचन प्रणाली ने धार्मिक आधार पर राजनीतिक प्रतिनिधित्व को संस्थागत रूप दिया। इसलिए 1909 के सुधारों को प्रतिनिधित्व के विस्तार की दिशा में एक सीमित कदम के साथ-साथ औपनिवेशिक शासन की नियंत्रणकारी संरचना के हिस्से के रूप में भी देखना चाहिए।

महात्मा गांधी पर गोखले का प्रभाव (Influence on Mahatma Gandhi)

गोपाल कृष्ण गोखले और महात्मा गांधी के संबंध भारतीय राजनीतिक इतिहास में विशेष महत्त्व रखते हैं। गांधी ने गोखले को अपना राजनीतिक गुरु माना। गोखले के प्रति गांधी का सम्मान उनकी राजनीतिक समझ, सार्वजनिक जीवन की नैतिकता और भारतीय समाज की परिस्थितियों के प्रति संवेदनशीलता से जुड़ा था। वर्ष 1912 में गोखले ने दक्षिण अफ्रीका की यात्रा की और वहाँ भारतीय समुदाय की समस्याओं तथा गांधी के नेतृत्व में चल रहे संघर्ष के संबंध में जानकारी प्राप्त की। उन्होंने भारतीय प्रवासियों के अधिकारों के प्रश्न पर समर्थन व्यक्त किया और संबंधित अधिकारियों के साथ संवाद किया। गांधी के राजनीतिक विकास पर गोखले का प्रभाव मुख्यतः तीन रूपों में देखा जा सकता है। पहला, राजनीति में नैतिकता और सार्वजनिक सेवा का महत्त्व; दूसरा, भारतीय समाज की वास्तविक परिस्थितियों को समझकर कार्य करने की आवश्यकता; और तीसरा, राजनीतिक परिवर्तन के लिए अनुशासन, धैर्य तथा जनसंपर्क का उपयोग। फिर भी गांधी की सत्याग्रह पद्धति और व्यापक जनांदोलन की रणनीति को गोखले के विचारों की केवल पुनरावृत्ति नहीं माना जा सकता। गांधी ने अपने अनुभवों और परिस्थितियों के अनुसार स्वतंत्र राजनीतिक दृष्टिकोण विकसित किया।

इस प्रकार गोखले गांधी के लिए महत्त्वपूर्ण राजनीतिक मार्गदर्शक थे, जबकि गांधी ने उनके नैतिक एवं सार्वजनिक सेवा संबंधी आदर्शों को एक व्यापक जनांदोलन की पद्धति से जोड़ा।

गोखले के राजनीतिक विचारों का आलोचनात्मक विश्लेषण (Critical Analysis of Gokhale's Political Thought)

गोखले की राजनीतिक भूमिका का मूल्यांकन उनकी उपलब्धियों और सीमाओं, दोनों के संदर्भ में किया जाना चाहिए :

1. प्रमुख उपलब्धियाँ (Major Contributions)

गोखले ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की उदारवादी राजनीति को वैचारिक तथा संस्थागत आधार प्रदान किया। उन्होंने राजनीतिक माँगों को तथ्यपरक तर्कों, विधायी बहस और प्रशासनिक समीक्षा के माध्यम से प्रस्तुत करने की परंपरा को मजबूत किया। उनके बजट भाषणों ने औपनिवेशिक वित्तीय नीतियों के जनहित संबंधी प्रभावों पर प्रश्न उठाए। शिक्षा के क्षेत्र में उनके प्रयासों ने प्राथमिक शिक्षा को सार्वजनिक उत्तरदायित्व से जोड़ने में योगदान दिया। भारत सेवक समाज की स्थापना ने राष्ट्रसेवा को संगठित और अनुशासित गतिविधि के रूप में विकसित करने का प्रयास किया। गांधी के साथ उनके संबंधों ने भारतीय राजनीति में नैतिकता और सार्वजनिक सेवा के आदर्शों के प्रसार को भी प्रभावित किया।

2. राजनीतिक दृष्टिकोण की सीमाएँ (Limitations of His Political Approach)

गोखले की राजनीति की प्रमुख सीमा औपनिवेशिक शासन की न्यायप्रियता और सुधार स्वीकार करने की क्षमता पर अपेक्षाकृत अधिक भरोसा करना थी। ब्रिटिश शासन की संस्थागत संरचना भारतीय जनता के प्रति पूर्णतः उत्तरदायी नहीं थी। इसलिए संवैधानिक माँगों और विधायी बहसों से प्राप्त परिणाम सीमित रहे। उग्रवादी नेताओं का मानना था कि याचिकाओं और क्रमिक सुधारों पर अत्यधिक निर्भरता से व्यापक जनदबाव कमजोर पड़ सकता है। बाल गंगाधर तिलक जैसे नेताओं ने स्वराज की अधिक स्पष्ट और सक्रिय माँग को प्राथमिकता दी। इन मतभेदों को केवल व्यक्तिगत विरोध के रूप में नहीं, बल्कि औपनिवेशिक शासन से संघर्ष की रणनीति को लेकर उत्पन्न वैचारिक अंतर के रूप में समझना चाहिए।

3. समग्र मूल्यांकन (Overall Assessment)

गोखले की संवैधानिक पद्धति तत्काल राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए पर्याप्त नहीं थी, लेकिन इससे उनके योगदान का महत्त्व समाप्त नहीं होता। उन्होंने औपनिवेशिक नीतियों की आलोचना के लिए तर्क, आँकड़ों और संस्थागत मंचों का उपयोग किया तथा सार्वजनिक सेवा को राजनीतिक जीवन का महत्त्वपूर्ण अंग बनाया। उनकी राजनीति की ऐतिहासिक उपलब्धि यह थी कि उन्होंने भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में राजनीतिक प्रशिक्षण, उत्तरदायी शासन, शिक्षा और आर्थिक न्याय जैसे प्रश्नों को प्रमुखता दी। उनकी सीमाओं का आलोचनात्मक अध्ययन करते हुए भी यह स्वीकार करना आवश्यक है कि उदारवादी राजनीति ने आगे विकसित हुए राष्ट्रीय आंदोलन के लिए एक महत्त्वपूर्ण वैचारिक और संगठनात्मक आधार तैयार किया।

सुझाव (Suggestions)

गोखले के राजनीतिक चिंतन के अध्ययन के आधार पर निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए जा सकते हैं:

1. संवैधानिक संस्थाओं को सुदृढ़ बनाना: लोकतांत्रिक व्यवस्था में विधायी बहस, सार्वजनिक जवाबदेही और प्रशासनिक पारदर्शिता को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।
2. शिक्षा को सार्वजनिक दायित्व मानना: गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और नागरिक चेतना को लोकतांत्रिक विकास का आधार बनाया जाना चाहिए।
3. राजनीति में नैतिकता को महत्त्व देना: सार्वजनिक पदों पर कार्य करने वाले व्यक्तियों में जनहित, उत्तरदायित्व और सेवा की भावना को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
4. आर्थिक नीतियों की तथ्यपरक समीक्षा करना: सरकारी व्यय और कराधान का मूल्यांकन सामाजिक न्याय तथा जनकल्याण के दृष्टिकोण से किया जाना चाहिए।
5. राजनीतिक रणनीतियों का संतुलित मूल्यांकन करना: संवैधानिक संवाद और जनभागीदारी को परस्पर विरोधी मानने के बजाय लोकतांत्रिक परिवर्तन के पूरक साधनों के रूप में देखा जाना चाहिए।

ये सुझाव गोखले के ऐतिहासिक विचारों की वर्तमान प्रासंगिकता को रेखांकित करते हैं, न कि उनके समय की राजनीतिक परिस्थितियों को आज की परिस्थितियों के समान मानते हैं।

निष्कर्ष (Conclusion)

प्रस्तुत अध्ययन के विश्लेषण से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त होते हैं:

1. गोखले का राजनीतिक चिंतन संवैधानिकता, क्रमिक सुधार, उदारवाद और सार्वजनिक सेवा के सिद्धांतों पर आधारित था।
2. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में उनके नेतृत्व ने औपनिवेशिक शासन की नीतियों की तर्कपूर्ण आलोचना तथा राजनीतिक प्रतिनिधित्व की माँग को सुदृढ़ किया।
3. केंद्रीय विधान परिषद में उनके प्रयासों ने वित्तीय उत्तरदायित्व, प्राथमिक शिक्षा और प्रशासनिक सुधारों को राष्ट्रीय राजनीतिक विमर्श का हिस्सा बनाया।
4. भारत सेवक समाज की स्थापना ने राष्ट्रनिर्माण में अनुशासित सार्वजनिक सेवा और प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की भूमिका को महत्त्व दिया।
5. गांधी के राजनीतिक विकास में गोखले का नैतिक दृष्टिकोण और सार्वजनिक सेवा की भावना प्रभावशाली रही, हालाँकि गांधी ने अपनी स्वतंत्र राजनीतिक पद्धति विकसित की।
6. गोखले की संवैधानिक राजनीति की प्रभावशीलता औपनिवेशिक शासन की सीमाओं के कारण बाधित रही, लेकिन इसने भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के वैचारिक और संस्थागत विकास में योगदान दिया।

गोपाल कृष्ण गोखले भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के उन प्रमुख नेताओं में थे जिन्होंने राजनीति को संवैधानिक सुधार, नैतिक उत्तरदायित्व और सार्वजनिक सेवा से जोड़ने का प्रयास किया। उनका राजनीतिक दर्शन इस विश्वास पर आधारित था कि शिक्षा, प्रशासनिक सुधार और राजनीतिक भागीदारी के विस्तार से भारतीय समाज स्वशासन की दिशा में आगे बढ़ सकता है।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में उनके नेतृत्व, केंद्रीय विधान परिषद में वित्तीय एवं प्रशासनिक प्रश्नों पर हस्तक्षेप, प्राथमिक शिक्षा के लिए किए गए प्रयास और भारत सेवक समाज की स्थापना ने उनके बहुआयामी योगदान को स्पष्ट किया।

उन्होंने औपनिवेशिक शासन की नीतियों की आलोचना करते हुए राजनीतिक संवाद और संस्थागत सुधारों को राष्ट्रीय आंदोलन का महत्त्वपूर्ण साधन बनाया।

हालाँकि, उनकी संवैधानिक पद्धति की सीमाएँ थीं। ब्रिटिश शासन की अनुत्तरदायी संरचना के कारण अनेक सुधार संबंधी माँगें अपेक्षित परिणाम प्राप्त नहीं कर सकीं। उग्रवादी नेताओं की आलोचना ने भी यह प्रश्न उठाया कि क्या केवल क्रमिक सुधार औपनिवेशिक शासन को पर्याप्त चुनौती दे सकते थे। फिर भी गोखले की भूमिका को केवल सीमित सुधारवाद के रूप में देखना उचित नहीं होगा, क्योंकि उन्होंने राजनीतिक संगठन, शिक्षा, आर्थिक उत्तरदायित्व और जनसेवा के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

अंततः कहा जा सकता है कि गोखले भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के वैचारिक एवं संस्थागत विकास के महत्त्वपूर्ण निर्माता थे। उनकी विरासत लोकतांत्रिक राजनीति में तर्कपूर्ण असहमति, सार्वजनिक उत्तरदायित्व, शिक्षा और नैतिक नेतृत्व के महत्त्व को रेखांकित करती है।

समग्रतः निष्कर्ष यह है कि गोखले की ऐतिहासिक भूमिका का आकलन केवल तत्काल राजनीतिक उपलब्धियों के आधार पर नहीं, बल्कि भारतीय राजनीति में संवैधानिक बहस, आर्थिक आलोचना, शिक्षा और सार्वजनिक सेवा की परंपरा विकसित करने के संदर्भ में किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची (References)

1. गांधी, मोहनदास करमचंद, (1927-1929), सत्य के प्रयोग अथवा आत्मकथा, मूलतः गुजराती में प्रकाशित।
2. चंद्र, बिपिन, मृदुला मुखर्जी, आदित्य मुखर्जी, के. एन. पणिक्कर एवं सुचेता महाजन, (1988), इंडियाज़ स्ट्रगल फॉर इंडिपेंडेंस, 1857-1947, पेंगुइन बुक्स।
3. नंदा, बी. आर. (1977), गोखले: द इंडियन मॉडरेट्स एंड द ब्रिटिश राज, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
4. वोल्पर्ट, स्टैनली ए. (1962), तिलक एंड गोखले: रिवोल्यूशन एंड रिफॉर्म इन द मेकिंग ऑफ मॉडर्न इंडिया, यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस।
5. स्पीयर, पर्सिवल, (1965), ए हिस्ट्री ऑफ इंडिया, खंड 2, पेंगुइन बुक्स।
6. भारत सरकार, विधायी विभाग, (1909)। भारतीय परिषद अधिनियम, 1909, भारत सरकार।

ISARA INSTITUTE OF MANAGEMENT & PROFESSIONAL STUDIES

WWW.IIMPS.IN

EARN YOUR

MBA



Accreditation & Ranking

UGC / NCTE Approved.

INFO@IIMPS.IN

011-41005174

RESEARCH GATEWAY

STOP PLAGIARISM

1 Submit your content in Word File.

2 Get report in 48 hrs.

3 *Missing content or references will be fixed.

4 Citation for your work.

5 Get accurate user friendly report.

researchgateway.in | info@researchgateway.in

+91-9205579779

AROGYAM ONLINE

Arogyam Ayurveda

Holistic Healing through herbs

100% NATURAL

PARIVARTAN PSYCHOLOGY CENTER

COLOR PSYCHOLOGY : HOW COLOR AFFECT YOUR CHILD

BLUE — Calms your Child's Mind & Body

YELLOW — Promotes Concentration, Stimulates the Memory

PINK — Evokes Empathy, makes your Child Calm

RED — Excites and energizes your Child's body

GREEN — Improves Reading speed and Comprehension

www.parivartan4u.com

Confuse about your children's future?

भारतीय भाषा, शिक्षा, साहित्य एवं शोध

ISSN 2321 – 9726

WWW.BHARTIYASHODH.COM

INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF MANAGEMENT SCIENCE & TECHNOLOGY

ISSN – 2250 – 1959 (0) 2348 – 9367 (P)

WWW.IRJMST.COM

INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF COMMERCE, ARTS AND SCIENCE

ISSN 2319 – 9202

WWW.CASIRJ.COM

INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF MANAGEMENT SOCIOLOGY & HUMANITIES

ISSN 2277 – 9809 (0) 2348 - 9359 (P)

WWW.IRJMSH.COM

INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF SCIENCE ENGINEERING AND TECHNOLOGY

ISSN 2454-3195 (online)

WWW.RJSET.COM

INTEGRATED RESEARCH JOURNAL OF MANAGEMENT, SCIENCE AND INNOVATION

ISSN 2582-5445

WWW.IRJMSI.COM

JOURNAL OF LEGAL STUDIES,POLITICS AND ECONOMICS RESEARCH

WWW.JLPER.COM